पंजाब राज्य

बनाम

नवराज सिंह

(आपराधिक अपील सं. 1075/2008)

14 जुलाई, 2008

[डॉ० अरिजीत पसायत और हरजीत सिंह बेदी, जे.जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 389 के तहत दोषसिद्धि और सजा के निलंबन की शक्ति - असाधारण मामलों तक सीमित होनी चाहिए, केवल इसलिए कि दोषी व्यक्ति की अपील स्वीकार की जा चुकी है। न्यायालय को दोषसिद्धि के आदेश को निलंबित नहीं करना चाहिए। न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह ऐसा आदेश पारित करते समय मामले के सभी पहलुओं पर विचार करते हुए आदेश के कारणों को रिकार्ड करे। उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि के आदेश को निलंबित करते समय कारण नहीं बताए हैं, इसलिए उच्च न्यायालय का उक्त आदेश रद्द होने योग्य है। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 और धारा 13 (1) (डी) सपठित धारा 13 (2)।

प्रत्यर्थी पटवारी हलका के रूप में काम कर रहा था और उसे धारा 7 व 13 (1) (डी) सपठित धारा 13 (2) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत दोषसिद्ध ठहराते हुए तीन वर्ष के कठोर कारावास से दण्डित किया गया।

प्रत्यर्थी ने अपील दायर की, जिसे स्वीकार किया गया। इसके बाद प्रत्यर्थी ने एक आवेदन धारा 389 दं.प्र.सं. सपठित धारा 482 दं.प्र.सं. में विशेष न्यायालय के

निर्णय को निलंबित करने हेतु दायर किया। उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि पर रोक लगा दी, जिसे विरुद्ध अपीलांट राज्य द्वारा वर्तमान अपील पेश की गई।

अपील स्वीकृत की गई। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि -

कानूनी स्थिति यह है कि हालाँकि कारावास के आदेश के अलावा, सजा के आदेश को निलंबित करने की शक्ति, संहिता की धारा 389 (1) से अलग नहीं है, इसका प्रयोग बहुत ही असाधारण मामलों तक सीमित होना चाहिए। केवल इसलिए कि दोषी व्यक्ति ने दोषसिद्धि को चुनौती देने के लिए अपील दायर की है, अदालत को दोषसिद्धि के आदेश के क्रियान्वयन को निलंबित नहीं करना चाहिए। अदालत का कर्तव्य है कि वह ऐसी सजा को स्थगित रखने के परिणामों सहित सभी पहलुओं पर गौर करे। उपरोक्त कानूनी स्थिति के आलोक में हमें इस प्रश्न की जाँच करनी होगी कि जब किसी लोकसेवक को पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है, तो उसकी स्थिति क्या होनी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब अपीलीय अदालत पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषसिद्धि और सजा को चुनौती देने के लिए दायर अपील को स्वीकार कर लेती है और अपील दायर करने के तुरंत बाद ऐसी अपील पर सुनवाई न की जा सके, तो उच्च न्यायालय को आम तौर पर अपील के निपटारे तक कारावास की सजा को निलंबित कर देना चाहिए, क्योंकि इससे इनकार करने पर अपील ही बेकार हो जाएगी। लेकिन, पीसी अधिनियम के तहत अपराध की दोषसिद्धि को निलंबित करना, उसकी अगली कड़ी के रूप में कारावास की सजा को कम करना, एक अलग मामला है। जब किसी न्यायालय द्वारा आयोजित न्यायिक निर्णय प्रक्रिया के बाद कोई लोकसेवक भ्रष्टाचार का दोषी पाया जाता है, तो विवेकशीलता की माँग है कि उसे तब तक भ्रष्ट माना जाना चाहिए, जब तक कि उसे किसी उच्चतर न्यायालय द्वारा दोषमुक्त न कर दिया जाए। मात्र तथ्य यह है कि एक अपीलीय या पुनरीक्षण मंच ने उनकी चुनौती पर विचार करने और ऐसे लोकसेवकों के

खिलाफ किए गए मुद्दों और निष्कर्षों पर एक बार फिर से गौर करने का निर्णय किया है, उन्हें ऐसे निष्कर्षों से अस्थायी रूप से भी मुक्त नहीं किया जाना चाहिए। यदि ऐसा कोई लोकसेवक सार्वजनिक पद पर बने रहे और तब तक आधिकारिक कार्य करना जारी रखने का हकदार हो जाता है, जब तक कि उसे दोषसिद्धि के आदेश के निलंबन के कारण ऐसे निष्कर्षों से न्यायिक रूप से मुक्त नहीं कर दिया जाता है, तो यह सार्वजनिक हित है, जो प्रभावित होता है और कभी-कभी, यहाँ तक कि अपूरणीय रूप से भी। जब भ्रष्टाचार के दोषी एक लोकसेवक को सार्वजनिक पद पर बने रहने की अनुमति दी जाती है, तो इससे ऐसे पद पर कार्यरत अन्य व्यक्तियों का मनोबल ख़राब होगा, और इसके परिणामस्वरूप ऐसे सार्वजनिक संस्थानों में लोगों का पहले से ही कम हुआ विश्वास आैर कम हो जाएगा, इसके अलावा अन्य ईमानदार लोक सेवकों का मनोबल गिर जाएगा जो या तो दोषी व्यक्ति के सहकर्मी या अधीनस्थ होंगे। यदि ईमानदार लोक सेवकों को दोषसिद्धि के निलंबन के कारण घोषित भ्रष्ट अधिकारियों से आदेश लेने के लिए मजबूर किया जाता है, तो इसका नतीजा सिस्टम को हिला देने वाला होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि अदालत को भ्रष्टाचार के आरोप में दोषी ठहराए गए लोक सेवक को तब तक केवल सार्वजनिक पद पर बने रहने में सहायता नहीं करनी चाहिए, जब तक कि वह अपीलीय या पुनरीक्षण स्तर पर न्यायिक निर्णय के बाद दोषमुक्त नहीं हो जाता। (पैरा 10)

संदर्भित मामले :

महाराष्ट्र राज्य बनाम गजानन और अन्य [2003 (12) एससीसी 432] भारत संघ बनाम अवतार सिंह एवं अन्य [2003 (12) एससीसी 434)] हरियाणा राज्य बनाम हसमत [2004 (6) एससीसी 175] पर भरोसा किया ।

2.1 संहिता की धारा 389 अपील लंबित रहने तक सजा के निष्पादन को निलंबित करने और अपीलकर्ता को जमानत पर रिहा करने से संबंधित है। जमानत और सजा के निलंबन के बीच अंतर है। धारा 389 के तत्त्वों में से एक यह है कि सजा के आदेश के निष्पादन को निलंबित करने का आदेश लिखित रूप में कारणों सहित होना चाहिए। यदि वह कारावास में है, तो उक्त अदालत उसे जमानत या अपने बांड पर रिहा करने का निर्देश दे सकती है। कारणों को लिखित रूप में दर्ज करने की आवश्यकता स्पष्ट रूप से इंगित करनी चाहिए आैर प्रासंगिक पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए। सजा को निलंबित करने और जमानत देने का आदेश नियमित रूप से पारित नहीं किया जाना चाहिए। (पैरा 11)

2.2 विद्वान् एकल न्यायाधीश ने दोषसिद्धि को निलंबित करने का निर्देश देते समय कोई कारण नहीं बताया। इस प्रकार विद्वान् एकल न्यायाधीश का आदेश, जिसमें दोषसिद्धि के निलंबन/स्थगन का निर्देश दिया गया है और साथ ही उक्त आदेश को वापस लेने से इनकार करने वाला आदेश चलने योग्य नहीं है और आदेश खारिज किया जाता है। (पैरा 12 व 13)

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय- 2008 की आपराधिक अपील सं. 1075

यह अपील पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के एस.बी. आपराधिक अपील सं. 1987/2002 में आपराधिक विविध प्रकरण सं. 51640/2005 में पारित अंतरिम निर्णय और आदेश दिनांक 17-01-2006 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है।

कुलदीप सिंह, अपीलार्थी की ओर से।

अजीत कुमार, शिखा रॉय पब्बी एवं एस.के. सबरवाल, प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय इस प्रकार है -

डॉ. अरिजीत पसायत, जे. -

1. इजाजत दी गई।

2. इस अपील में पंजाब व हरियाणा उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को चुनौती दी गई है, जिसमें निर्देश दिया गया कि एस.बी. की अपील सं. 1498/2002 लंबित अवधि के दौरान प्रत्यर्थी की दोषसिद्धि पर रोक रहेगी।

3. प्रकरण के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं :

4. प्रत्यर्थी, जो पटवारी हलका के रूप में काम कर रहा था और उसे विशेष न्यायाधीश, नवांशहर, पंजाब द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में 'पीसी एक्ट') की धारा 13(2) सपठित धारा 7 और 13(1) (डी) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए दोषी ठहराते हुए तीन साल की अवधि के कठोर कारावास और 2,000/- रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई। प्रश्नगत निर्णय के विरुद्ध प्रत्यर्थी ने उपरोक्त आपराधिक अपील दायर की, जिसे स्वीकार कर लिया गया। अपील स्वीकार होने के बाद, प्रत्यर्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 389 (1) सपठित धारा 482 में विशेष न्यायाधीश के निर्णय के निलंबन के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया।

5. उच्च न्यायालय ने दिनांक 27.1.2005 के आदेश द्वारा दोषसिद्धि पर रोक लगा दी। अपीलकर्ता के अनुसार, उच्च न्यायालय ने के.सी. सरीन बनाम सी.बी.आई., चंडीगढ़ में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को ध्यान में नहीं रखा। उच्च न्यायालय ने उस आवेदन को केवल इस आधार पर खारिज कर दिया कि आदेश की समीक्षा की अनुमति नहीं थी।

6. अपीलकर्ता के विद्वान् वकील द्वारा यह तर्क दिया गया कि दोषसिद्धि का निलंबन चलने योग्य नहीं है। उन्होंने बताया गया है कि उच्च न्यायालय ने नोट किया

कि कलेक्टर, नवांशहर ने उनकी सेवाओं को पटवारी हलका, मुसापुर के रूप में वितरित करने के लिए एक नोटिस दिया था।

7. प्रत्यर्थी के विद्वान् वकील ने कहा कि उच्च न्यायालय ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि यह एक ऐसा मामला था, जहाँ दोषसिद्धि को निलंबित करने की प्रार्थना स्वीकार की जानी थी, क्योंकि यदि दोषसिद्धि का आदेश निलंबित नहीं किया जाता, तो प्रत्यर्थी को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता।

8. महाराष्ट्र राज्य बनाम गजानन और अन्य, 2 [2003 (12) एससीसी 432] में, इसे इस प्रकार नोट किया गया था:

आक्षेपित आदेश और के.सी. सरीन के मामले में इस न्यायालय के फैसले का अवलोकन करने के बाद [2001 (6) एससीसी 584] हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय के पास तथ्यों के आधार पर भी के.सी. सरीन मामले में निर्धारित कानून को अलग करने के लिए कोई जगह नहीं थी। उक्त मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि: (एससीसी पृष्ठ 589, पैरा 11)

> "11. कानूनी स्थिति यह है कि हालाँकि कारावास के आदेश के अलावा, सजा के आदेश को निलंबित करने की शक्ति, संहिता की धारा 389 (1) से अलग नहीं है, इसका प्रयोग बहुत ही असाधारण मामलों तक सीमित होना चाहिए। केवल इसलिए कि दोषी व्यक्ति ने दोषसिद्धि को चुनौती देने के लिए अपील दायर की है, अदालत को दोषसिद्धि के आदेश के क्रियान्वयन को निलंबित नहीं करना चाहिए। अदालत का कर्तव्य है कि वह ऐसी सजा को स्थगित रखने के परिणामों सहित सभी पहलुओं पर गौर करे। उपरोक्त कानूनी स्थिति के आलोक में हमें इस प्रश्न की जाँच करनी होगी कि जब किसी

लोकसेवक को पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है, तो उसकी स्थिति क्या होनी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब अपीलीय अदालत पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषसिद्धि और सजा को चुनौती देने के लिए दायर अपील को स्वीकार कर लेती है आैर अपील दायर करने के तुरंत बाद एेसी अपील पर सुनवाई न की जा सके, तो उच्च न्यायालय को आम तौर पर अपील के निपटारे तक कारावास की सजा को निलंबित कर देना चाहिए, क्योंकि इससे इनकार करने पर अपील ही बेकार हो जाएगी। लेकिन, पीसी अधिनियम के तहत अपराध की दोषसिद्धि को निलंबित करना, उसकी अगली कड़ी के रूप में कारावास की सजा को कम करना, एक अलग मामला है।"

(जोर दिया गया)

के.सी. सरीन के निर्णय में इस न्यायालय ने माना है कि केवल असाधारण मामलों में ही अदालत को अधिनियम से उत्पन्न होने वाले मामलों में रोक की ऐसी शक्ति का प्रयोग करना चाहिए। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में कहीं भी यह नहीं बताया कि वह कौन सा असाधारण तथ्य है, जिसके कारण उसकी राय में दोषसिद्धि पर रोक लगाना आवश्यक हो गया। उच्च न्यायालय इस न्यायालय के इस निर्देश पर भी ध्यान देने में विफल रहा कि इस तरह की सजा को स्थगित रखने के प्रभाव सहित सभी पहलुओं को देखना उसका कर्तव्य है। हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि पर रोक लगाते समय उपरोक्त किसी भी कारक पर विचार नहीं किया है। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि के.सी. सरीन के मामले में इस न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचार को बाद में भारत संघ बनाम अतर सिंह [2003(12) एससीसी 434] में इस न्यायालय के निर्णय का अनुमोदन किया गया था।

9. भारत संघ बनाम अवतार सिंह एवं अन्य, (2003(12) एससीसी 434) में अभिनिर्धारित किया गया था कि :-

> “यह अपील उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध निर्देशित है, जिसमें प्रत्यर्थी-अभियुक्त काे भा.दं.सं. की धारा 409 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 के तहत दोषी ठहराया गया है, ने उच्च न्यायालय में अपील दायर की, जिस पर विचार किया गया है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के तहत दायर एक आवेदन पर, उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को केवल इस आधार पर निलंबित कर दिया है कि दोषसिद्धि के गैर-निलंबन से अपराधी सरकारी कर्मचारी को सेवा से हटाया जा सकता है।"

10. के.सी. सरीन के मामले में इसे इस प्रकार नोट किया गया था :

> "11. कानूनी स्थिति यह है कि हालाँकि कारावास के आदेश के अलावा, सजा के आदेश को निलंबित करने की शक्ति, संहिता की धारा 389 (1) से अलग नहीं है, इसका प्रयोग बहुत ही असाधारण मामलों तक सीमित होना चाहिए। केवल इसलिए कि दोषी व्यक्ति ने दोषसिद्धि को चुनौती देने के लिए अपील दायर की है, अदालत को दोषसिद्धि के आदेश के क्रियान्वयन को निलंबित नहीं करना चाहिए। अदालत का कर्तव्य है कि वह ऐसी सजा को स्थगित रखने के परिणामों सहित सभी पहलुओं पर गौर करे। उपरोक्त कानूनी स्थिति के आलोक में हमें इस प्रश्न की जाँच करनी होगी कि जब किसी लोकसेवक को पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है, तो उसकी स्थिति क्या होनी चाहिए। इसमें कोई

संदेह नहीं है कि जब अपीलीय अदालत पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषसिद्धि और सजा को चुनौती देने के लिए दायर अपील को स्वीकार कर लेती है और अपील दायर करने के तुरंत बाद ऐसी अपील पर सुनवाई न की जा सके, तो उच्च न्यायालय को आम तौर पर अपील के निपटारे तक कारावास की सजा को निलंबित कर देना चाहिए, क्योंकि इससे इनकार करने पर अपील ही बेकार हो जाएगी। लेकिन, पीसी अधिनियम के तहत अपराध की दोषसिद्धि को निलंबित करना, उसकी अगली कड़ी के रूप में कारावास की सजा को कम करना, एक अलग मामला है।"

12. भारत में लोकसेवकों द्वारा भ्रष्टाचार अब विकराल रूप ले चुका है। इसकी पकड़ गणतंत्र की रक्षा के लिए बनी संस्थाओं पर भी पड़ने लगी है। जब तक उन जालों को सार्वजनिक कार्यालयों के सामान्य और व्यवस्थित कामकाज से मजबूत विधायी, कार्यकारी और न्यायिक प्रयास से रोका और बाधित नहीं किया जाता है, तब तक भ्रष्ट लोकसेवक ऐसी संस्थाओं के कामकाज को पंगु बना सकते हैं और इस तरह लोकतांत्रिक राजनीति में बाधा डाल सकते हैं। यदि ऐसे लोगों को सार्वजनिक संस्थानों का प्रबंधन और संचालन जारी रखने की अनुमति दी जाती है, तो भ्रष्ट लोकसेवकों का प्रसार सामाजिक व्यवस्था को पंगु बनाने की गति पकड़ सकता है। जब किसी न्यायालय द्वारा आयोजित न्यायिक निर्णय प्रक्रिया के बाद कोई लोकसेवक भ्रष्टाचार का दोषी पाया जाता है, विवेकशीलता की माँग है कि उसे तब तक भ्रष्ट माना जाना चाहिए, जब तक कि उसे किसी उच्चतर न्यायालय द्वारा दोषमुक्त न कर दिया जाए। मात्र तथ्य यह है कि एक अपीलीय या पुनरीक्षण मंच ने उनकी चुनौती पर विचार करने और ऐसे लोकसेवकों के खिलाफ किए गए मुद्दों और निष्कर्षों पर एक बार फिर से गौर करने का निर्णय किया है, उन्हें ऐसे निष्कर्षों से अस्थायी रूप से भी मुक्त नहीं किया जाना

चाहिए। यदि ऐसा कोई लोकसेवक सार्वजनिक पद पर बने रहे और तब तक आधिकारिक कार्य करना जारी रखने का हकदार हो जाता है, जब तक कि उसे दोषसिद्धि के आदेश के निलंबन के कारण ऐसे निष्कर्षों से न्यायिक रूप से मुक्त नहीं कर दिया जाता है, तो यह सार्वजनिक हित है, जो प्रभावित होता है और कभी-कभी, यहाँ तक कि अपूरणीय रूप से भी। जब भ्रष्टाचार के दोषी एक लोकसेवक को सार्वजनिक पद पर बने रहने की अनुमति दी जाती है, तो इससे ऐसे पद पर कार्यरत अन्य व्यक्तियों का मनोबल ख़राब होगा, और इसके परिणामस्वरूप ऐसे सार्वजनिक संस्थानों में लोगों का पहले से ही कम हुआ विश्वास और कम हो जाएगा, इसके अलावा अन्य ईमानदार लोक सेवकों का मनोबल गिर जाएगा जो या तो दोषी व्यक्ति के सहकर्मी या अधीनस्थ होंगे। यदि ईमानदार लोक सेवकों को दोषसिद्धि के निलंबन के कारण घोषित भ्रष्ट अधिकारियों से आदेश लेने के लिए मजबूर किया जाता है, तो इसका नतीजा सिस्टम को हिला देने वाला होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि अदालत को भ्रष्टाचार के आरोप में दोषी ठहराए गए लोक सेवक को तब तक केवल (एसआईसी) सार्वजनिक पद पर बने रहने में सहायता नहीं करनी चाहिए, जब तक कि वह अपीलीय या पुनरीक्षण स्तर पर न्यायिक निर्णय के बाद दोषमुक्त नहीं हो जाता। यह अलग बात है कि कोई भ्रष्ट सार्वजनिक अधिकारी दोषसिद्धि को निलंबित करने वाले अदालती आदेश की मदद के बिना भी ऐसे सार्वजनिक पद पर बना रह सकता है।

13. उपरोक्त नीति को सार्वजनिक कार्यालयों की प्रभावकारिता और उचित कार्यप्रणाली के लिए आवश्यक माना जा सकता है। यदि ऐसा है, तो कानूनी स्थिति यह निर्धारित की जा सकती है कि जब किसी लोक सेवक के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोप में सजा हो तो अपीलीय अदालत या पुनरीक्षण अदालत को अपील के लंबित रहने के दौरान सजा के आदेश को निलंबित नहीं करना चाहिए, भले ही कारावास की सजा निलंबित हो। यह एक उत्कृष्ट सार्वजनिक नीति होगी कि अपील या पुनरीक्षण के

निपटान तक कारावास की सजा को स्थगित रखने के बावजूद दोषी लोक सेवक को दोषसिद्धि की विकलांगता के तहत रखा जाएगा।"

11. हरियाणा राज्य बनाम हसमत, [2004 (6) एससीसी 175] में इसे इस प्रकार नोट किया गया था:

> "6. संहिता की धारा 389 अपील लंबित रहने तक सजा के निष्पादन को निलंबित करने और अपीलकर्ता को जमानत पर रिहा करने से संबंधित है। जमानत और सजा के निलंबन के बीच अंतर है। धारा 389 के तत्त्वों में से एक यह है कि सजा के आदेश के निष्पादन को निलंबित करने का आदेश लिखित रूप में कारणों सहित होना चाहिए। यदि वह कारावास में है, तो उक्त अदालत उसे जमानत या अपने बांड पर रिहा करने का निर्देश दे सकती है। कारणों को लिखित रूप में दर्ज करने की आवश्यकता स्पष्ट रूप से इंगित करनी चाहिए और प्रासंगिक पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए। सजा को निलंबित करने और जमानत देने का आदेश नियमित रूप से पारित नहीं किया जाना चाहिए।"

12. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने दोषसिद्धि को निलंबित करने का निर्देश देते समय कोई कारण नहीं बताया।

13. उपरोक्त स्थिति में विद्वान् एकल न्यायाधीश का आदेश, जिसमें दोषसिद्धि के निलंबन/स्थगन का निर्देश दिया गया है और साथ ही उक्त आदेश को वापस लेने से इनकार करने वाला आदेश चलने योग्य नहीं है और आदेश खारिज किया जाता है।

14. अपील स्वीकृत की गई।

अपील स्वीकार की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी डॉ. पवन कुमार बिश्नोई (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।